॥ श्रीरामदूताय नमः ॥

सम्पूर्ण सुंदरकांड

श्रीरामचरितमानस • पंचम सोपान • गोस्वामी तुलसीदासकृत

शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशान्तिप्रदं
ब्रह्माशम्भुफणीन्द्रसेव्यमनिशं वेदान्तवेद्यं विभुम्।
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं हरि
वन्देऽहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूडामणिम्॥१॥

नान्या स्पृहा रघुपते हृदयेऽस्मदीये
सत्यं वदामि च भवानखिलान्तरात्मा।
भक्तिं प्रयच्छ रघुपुङ्गव निर्भरां मे
कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च॥२॥

अतुलितबलधामं हेमशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि॥३॥

जामवंत के बचन सुहाए।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए॥
तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई।
सहि दुख कंद मूल फल खाई॥

जब लगि आवौं सीतहि देखी।
होइहि काजु मोहि हरष बिसेषी॥
यह कहि नाइ सबन्हि कहुँ माथा।
चलेउ हरषि हियँ धरि रघुनाथा॥

सिंधु तीर एक भूधर सुंदर।
कौतुक कूदि चढ़েউ ता ऊपर।
बार बार रघुबीर सँभारी।
तरकेउ पवनतनय बल भारी॥

जेहि गिरि चरन देइ हनुमंता।
चलेउ सो गा पाताल तुरंता॥
जिमि अमोघ रघुपति कर बाना।
एही भाँति चलेउ हनुमाना॥

जलनिधि रघुपति दूत बिचारी।
तैं मैनाक होहि श्रमहारी॥

दो०- हनूमान तेहि परसा कर पुनि कीन्ह प्रनाम।
राम काजु कीन्हें बिनु मोहि कहाँ बिश्राम॥१॥

जात पवनसुत देवन्ह देखा।
जानैं कहुँ बल बुद्धि बिसेषा॥
सुरसा नाम अहिन्ह के माता।
पठइन्हि आइ कही तेहि बाता॥

आजु सुरन्ह मोहि दीन्ह अहारा।
सुनत बचन कह पवनकुमारा॥
राम काजु करि फिरि मैं आवौं।
सीता कइ सुधि प्रभुहि सुनावौं।

तब तव बदन पैठहिउँ आई।
सत्य कहउँ मोहि जान दे माई॥
कवनेहुँ जतन देइ नहि जाना।
ग्रससि न मोहि कहेउ हनुमाना।

जोजन भरि तेहिं बदनु पसारा।
कपि तनु कीन्ह दुगुन बिस्तारा॥
सोरह जोजन मुख तेहि ठयऊ।
तुरत पवनसुत बत्तिस भयऊ।

जस जस सुरसा बदनु बढ़ावा।
तासु दून कपि रूप देखावा।
सत जोजन तेहिं आनन कीन्हा।
अति लघु रूप पवनसुत लीन्हा॥

बदन पइठि पुनि बाहेर आवा।
मागा बिदा ताहि सिरु नावा॥

मोहि सुरन्ह जेहि लागि पठावा।
बुधि बिल मरमु तोर मैं पावा॥

दो०- राम काजु सबु करिहहु तुम्ह बल बुद्धि निधान।
आसषि देइ गई सो हरषि चलेउ हनुमान॥२॥

नसिचिरि एक सधि महुँ रहई।
करि माया नभु के खग गहई॥
जीव जंतु जे गगन उड़ाहीं।
जल बलिोकि तिन्हि कै परछाहीं॥

गहइ छाहँ सक सो न उड़ाई।
एहि बधि सदा गगनचर खाई॥
सोइ छल हनूमान कहँ कीन्हा।
तासु कपटु कपि तुरतहि चीन्हा॥

ताहि मारि मारुतसुत बीरा।
बारधि पार गयउ मतधीरा॥
तहाँ जाइ देखी बन सोभा।
गुंजत चंचरीक मधु लोभा॥

नाना तरु फल फूल सुहाए।
खग मृग बूंद देखि मन भाए॥
सैल बसिाल देखि एक आगें।
ता पर धाइ चढ़ेउ भय त्यागें।

उमा न कछु कपि कै अधकिाई।
प्रभु प्रताप जो कालहि खाई॥
गरि पर चढ़ि लंका तेहि देखी।
कहि न जाइ अति दुर्ग बसिेषी॥

अति उतंग जलनधि चहु पासा।
कनक कोट कर परम प्रकासा॥

छं०- कनक कोट बचित्रि मनि कृत सुंदरायतना घना।
चउहट्ट हट्ट सुबट्ट बीथीं चारु पुर बहु बधि बना॥
गज बाजि खच्चर नकिर पदचर रथ बरूथन्हि को गनै।

बहुरूप निसिचर जूथ अतिबल सेन बरनत नहि बनै॥

बन बाग उपबन बाटिका सर कूप बापी सोहहीं।
नर नाग सुर गंधर्ब कन्या रूप मुनि मन मोहहीं॥
कहुँ माल देह बिसाल सैल समान अतिबल गर्जहीं।
नाना अखारेन्ह भिरहिं बहुबिधि एक एकन्ह तर्जहीं।

करि जतन भट कोटिन्ह बिकट तन नगर चहुँ दिसि रिच्छहीं।
कहुँ महिष मानुष धेनु खर अज खल निसाचर भच्छहीं॥
एहि लागि तुलसीदास इन्ह की कथा कछु एक है कही।
रघुबीर सर तीरथ सरीरन्हि त्यागि गति पैहहिं सही॥

दो०- पुर रखवारे देखि बहु कपि मन कीन्ह बिचार।
अति लघु रूप धरौं निसि नगर करौं पइसार॥३॥

मसक समान रूप कपि धरी।
लंकहि चलेउ सुमिरि नरहरी॥
नाम लंकिनी एक निसिचिरी।
सो कह चलेसि मोहि निंदरी॥

जानेहि नहीं मरमु सठ मोरा।
मोर अहार जहाँ लगि चोरा॥
मुठिका एक महा कपि हनी।
रुधिर बमत धरनी ढनमनी॥

पुनि संभारि उठी सो लंका।
जोरि पानि कर बिनय ससंका॥
जब रावनहि ब्रह्म बर दीन्हा।
चलत बिरंचि कहा मोहि चीन्हा॥

बिकल होसि तैं कपि के मारे।
तब जानेसु निसिचर संघारे॥
तात मोर अति पुन्य बहूता।
देखेउँ नयन राम कर दूता॥

दो०- तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग॥४॥

प्रबसि नगर कीजे सब काजा।
हृदयँ राखि कोसलपुर राजा॥
गरल सुधा रपि करहि मिताई।
गोपद सधि अनल सतिलाई॥

गरुड़ सुमेरु रेनु सम ताही।
राम कृपा करि चितिवा जाही॥
अति लघु रूप धरेउ हनुमाना।
पैठा नगर सुमरि भगवाना॥

मंदरि मंदरि प्रति करि सोधा।
देखे जहँ तहँ अगनति जोधा॥
गयउ दसानन मंदरि माहीं।
अति बिचित्रि कहि जात सो नाहीं॥

सयन कएँ देखा कपि तेही।
मंदरि महुँ न दीखि बैदेही॥
भवन एक पुनि दीख सुहावा।
हरि मंदरि तहँ भन्नि बनावा॥

दो०- रामायुध अंकति गृह सोभा बरनि नि जाइ।
नव तुलसिका बूंद तहँ देखि हरष कपिराइ॥५॥

लंका निसिचिर निकर निवासा।
इहाँ कहाँ सज्जन कर बासा॥
मन महुँ तरक करै कपि लागा।
तेही समय बिभीषनु जागा॥

राम राम तेहि सुमरिन कीन्हा।
हृदयँ हरष कपि सजन चीन्हा॥
एहि सन हठि करिहउँ पहिचानी।
साधु ते होई न कारज हानी॥

बिप्रि रूप धरि बचन सुनाए।
सुनत बिभीषन उठि तहँ आए॥
करि प्रनाम पूँछी कुसलाई।
बिप्रि कहहु निज कथा बुझाई॥

की तुम्ह हरि दासन्ह महँ कोई।
मोरें हृदय प्रीति अति होई॥
की तुम्ह रामु दीन अनुरागी।
आयहु मोहि करन बड़भागी॥

दो०- तब हनुमंत कही सब राम कथा निज नाम।
सुनत जुगल तन पुलक मन मगन सुमिरि गुन ग्राम॥६॥

सुनहु पवनसुत रहनि हमारी।
जिमि दसनन्हि महुँ जीभ बिचारी॥
तात कबहुँ मोहि जानि अनाथा।
करिहहिं कृपा भानुकुल नाथा॥

तामस तनु कछु साधन नाहीं।
प्रीति न पद सरोज मन माहीं॥
अब मोहि भा भरोस हनुमंता।
बिनु हरिकृपा मिलहिं नहिं संता॥

जौं रघुबीर अनुग्रह कीन्हा।
तौ तुम्ह मोहि दरसु हठि दीन्हा॥
सुनहु बिभीषन प्रभु के रीती।
करहिं सदा सेवक पर प्रीती॥

कहहु कवन मैं परम कुलीना।
कपि चंचल सबहीं बिधि हीना।।
प्रात लेइ जो नाम हमारा।
तेहि दिन ताहि न मिलै अहारा॥

दो०- अस मैं अधम सखा सुनु मोहू पर रघुबीर।
कीन्ही कृपा सुमिरि गुन भरे बिलोचन नीर॥७॥

जानतहूँ अस स्वामि बिसारी।
फिरहिं ते काहे न होहिं दुखारी॥
एहि बिधि कहत राम गुन ग्रामा।
पावा अनिर्बाच्य बिश्रामा।

पुनि सब कथा बिभीषन कही।
जेहि बिधि जनकसुता तहँ रही।

तब हनुमंत कहा सुनु भ्राता।
देखी चहउँ जानकी माता।

जुगुति बिभीषन सकल सुनाई।
चलेउ पवनसुत बिदा कराई।
करि सोइ रूप गयउ पुनि तहवाँ।
बन असोक सीता रह जहवाँ।

देखि मनहि महुँ कीन्ह प्रनामा।
बैठेहि बीति जात निसि जामा॥
कृस तनु सीस जटा एक बेनी।
जपति हृदय रघुपति गुन श्रेनी॥

दो०- निज पद नयन दिएँ मन राम पद कमल लीन।
परम दुखी भा पवनसुत देखि जानकी दीन॥८॥

तरु पल्लव महुँ रहा लुकाई।
करइ बिचार करौं का भाई॥
तेहि अवसर रावनु तहँ आवा।
संग नारि बहु किएँ बनावा॥

बहु बिधि खल सीतहि समुझावा।
साम दान भय भेद देखावा।
कह रावनु सुनु सुमुखि सयानी।
मंदोदरी आदि सब रानी॥

तव अनुचरी करउँ पन मोरा।
एक बार बिलोकु मम ओरा॥
तृन धरि ओट कहति बैदेही।
सुमिरि अवधपति परम सनेही॥

सुनु दसमुख खद्योत प्रकासा।
कबहुँ कि नलिनी करइ बिकासा॥
अस मन समुझु कहति जानकी।
खल सुधि नहि रिघुबीर बान की।

सठ सूनें हरि आनेहि मोही।
अधम निलज्ज लाज नहि तोही॥

दो०- आपुहि सुनि खद्योत सम रामहि भानु समान।।
पुरुष बचन सुनि काढ़ि असि बोला अति खिसिआन॥९॥

सीता तैं मम कृत अपमाना।
कटिहउँ तव सिरि कठिन कृपाना॥
नाहि त सपदि मानु मम बानी।
सुमुखि होति न त जीवन हानी॥

स्याम सरोज दाम सम सुंदर।
प्रभु भुज करि कर सम दसकंधर॥
सो भुज कंठ कि तव असि घोरा।
सुनु सठ अस प्रवान पन मोरा॥

चंद्रहास हरु मम परितापं।
रघुपति बिरह अनल संजातं॥
सीतल निसित बहसि बर धारा।
कह सीता हरु मम दुख भारा॥

सुनत बचन पुनि मारन धावा।
मयतनयाँ कहि नीति बुझावा।।
कहेसि सकल निसिचरिन्हि बोलाई।
सीतहि बहु बिधि त्रासहु जाई॥

मास दिवस महुँ कहा न माना।
तो मैं मारबि काढ़ि कृपाना॥

दो०- भवन गयउ दसकंधर इहाँ पिसाचिनि बृंद।
सीतहि त्रास देखावहि धरहि रूप बहु मंद॥१०॥

त्रिजटा नाम राच्छसी एका।
राम चरन रति निपुन बिबेका॥
सबन्हो बोलि सुनाएसि सपना।
सीतहि सेइ करहु हित अपना॥

सपनें बानर लंका जारी।
जातुधान सेना सब मारी॥
खर आरूढ़ नगन दससीसा।
मुंडति सरि खंडति भुज बीसा॥

एहि बिधि सो दच्छनि दसि जाई।
लंका मनहुँ बभीषन पाई॥
नगर फिरी रघुबीर दोहाई।
तब प्रभु सीता बोलि पठाई॥

यह सपना मैं कहउँ पुकारी।
होइहि सत्य गएँ दिन चारी॥
तासु बचन सुनि ते सब डरीं।
जनकसुता के चरनन्हि परीं॥

दो०- जहँ तहँ गईं सकल तब सीता कर मन सोच।
मास दिवस बीतें मोहि मारिहि निसिचर पोच॥११॥

त्रिजटा सन बोलीं कर जोरी।
मातु बिपति संगिनि तैं मोरी॥
तजौं देह करु बेगि उपाई।
दुसह बिरहु अब नहि सहि जाई॥

आनि काठ रचु चिता बनाई।
मातु अनल पुनि देहि लगाई।
सत्य करहि मम प्रीति सयानी।
सुनै को श्रवन सूल सम बानी॥

सुनत बचन पद गहि समुझाएसि।
प्रभु प्रताप बल सुजसु सुनाएसि॥
निसि नि अनल मिलि सुनु सुकुमारी।
अस कहि सो निज भवन सिधारी॥

कह सीता बिधि भा प्रतिकूला।
मिलिहि न पावक मिटिहि न सूला॥
देखिअत प्रगट गगन अंगारा।
अवनि न आवत एकउ तारा॥

पावकमय ससि स्त्रवत न आगी।
माईं मोहि जानि हितभागी॥
सुनहि बिनय मम बटिप असोका।
सत्य नाम करु हरु मम सोका।

नूतन किसलय अनल समाना।
देहि अगिनि जनि करहि निदाना।
देखि परम बिरहाकुल सीता।
सो छन कपिहि कलप सम बीता।

कपि करि हृदयँ बिचार दीन्हि मुद्रिका डारी तब।
जनु असोक अंगार दीन्हि हरषि उठि कर गहेउ॥१२॥

तब देखी मुद्रिका मनोहर।
राम नाम अंकित अति सुंदर॥
चकित चितव मुदरी पहिचानी।
हरष बिषाद हृदयँ अकुलानी॥

जीति को सकइ अजय रघुराई।
माया तें असि रचि नहि जाई॥
सीता मन बिचार कर नाना।
मधुर बचन बोलेउ हनुमाना॥

रामचंद्र गुन बरनैं लागा।
सुनतहि सीता कर दुख भागा॥
लागीं सुनैं श्रवन मन लाई।
आदिहु तें सब कथा सुनाई।

श्रवनामृत जेहि कथा सुहाई।
कही सो प्रगट होति किनि भाई॥
तब हनुमंत निकट चलि गयऊ।
फिरि बैठीं मन बिसमय भयऊ॥

राम दूत मैं मातु जानकी।
सत्य सपथ करुनानिधान की।
यह मुद्रिका मातु मैं आनी।
दीन्हि राम तुम्ह कहँ सहिदानी।।

नर बानरहि संग कहु कैसें।
कही कथा भइ संगति जैसें।

दो०- कपि के बचन सप्रेम सुनि उपजा मन बिस्वास।
जाना मन क्रम बचन यह कृपासिंधु कर दास॥१३॥

हरिजन जानि प्रीति अति गाढ़ी।
सजल नयन पुलकावलि बाढ़ी।
बूड़त बिरह जलधि हनुमाना।
भयहु तात मो कहुँ जलजाना।

अब कहु कुसल जाउँ बलिहारी।
अनुज सहित सुख भवन खरारी॥
कोमलचित कृपाल रघुराई।
कपि केहि हेतु धरी निठुराई॥

सहज बानि सेवक सुखदायक।
कबहुँक सुरति करत रघुनायक।
कबहुँ नयन मम सीतल ताता।
होइहहि निरखि स्याम मृदु गाता॥

बचनु न आव नयन भरे बारी।
अहह नाथ हौं निपट बिसारी॥
देखि परम बिरहाकुल सीता।
बोला कपि मृदु बचन बिनीता।

मातु कुसल प्रभु अनुज समेता।
तब दुख दुखी सुकृपा निकेता॥
जनि जननी मानहु जियँ ऊना।
तुम्ह ते प्रेमु राम के दूना॥

दो०- रघुपति कर संदेसु अब सुनु जननी धरि धीर।
अस कहि कपि गदगद भयउ भरे बिलोचन नीर॥१४॥

कहेउ राम बियोग तव सीता।
मो कहुँ सकल भए बिपरीता॥
नव तरु किसलय मनहुँ कृसानू।
कालनिसा सम निसि ससि भानू॥

कुबलय बपिनि कुंत बन सरसिा।
बारदि तपत तेल जनु बरसिा॥
जे हति रहे करत तेइ पीरा।
उरग स्वास सम त्रबिधि समीरा॥

कहेहू तें कछु दुख घटि होई।
काहि कहौं यह जान न कोई॥
तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा।
जानत प्रयिा एकु मनु मोरा॥

सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं।
जानु प्रीति रिसु एतनेहि भाहीं॥
प्रभु संदेसु सुनत बैदेही।
मगन प्रेम तन सुधि नहि तेही॥

कह कपि हृदयँ धीर धरु माता।
सुमरि राम सेवक सुखदाता॥
उर आनहु रघुपति प्रभुताई।
सुनि मम बचन तजहु कदराई॥

दो०- नसिचिर नकिर पतंग सम रघुपति बान कृसानु।
जननी हृदयँ धीर धरु जरे नसिाचर जानु॥१५॥

जौं रघुबीर होति सुधि पाई।
करते नहि बलिंबु रघुराई।
राम बान रबि उएँ जानकी।
तम बरूथ कहँ जातुधान की।

अबहि मातु मैं जाउँ लवाई।
प्रभु आयसु नहि राम दोहाई॥
कछुक दविस जननी धरु धीरा।
कपनि्ह सहति अइहहि रघुबीरा॥

नसिचिर मारि तोहि लै जैहहि।
तहिुँ पुर नारदादि जसु गैहहि॥
हैं सुत कपि सब तुम्हहि समाना।
जातुधान अति भट बलवाना॥

मोरें हृदय परम संदेहा।
सुनि किपि प्रगट कीन्हि निजि देहा॥
कनक भूधराकार सरीरा।
समर भयंकर अतिबल बीरा॥

सीता मन भरोस तब भयऊ।
पुनि लघु रूप पवनसुत लयऊ।

दो०- सुनु माता साखामृग नहिं बल बुद्धि बिसाल।
प्रभु प्रताप तें गरुड़हि खाइ परम लघु ब्याल॥१६॥

मन संतोष सुनत कपि बानी।
भगति प्रताप तेज बल सानी॥
आसिष दीन्हि रामप्रिय जाना।
होहु तात बल सील निधाना॥

अजर अमर गुननिधि सुत होहू।
करहुँ बहुत रघुनायक छोहू।
करहुँ कृपा प्रभु अस सुनि काना।
निर्भर प्रेम मगन हनुमाना॥

बार बार नाएसि पद सीसा।
बोला बचन जोरि कर कीसा॥
अब कृतकृत्य भयउँ मैं माता।
आसिष तव अमोघ बिख्याता॥

सुनहु मातु मोहि अतिसय भूखा।
लागि देखि सुंदर फल रूखा॥
सुनु सुत करहि बिपिनि रखवारी।
परम सुभट रजनीचर भारी॥

तिन्हि कर भय माता मोहि नाहीं।
जौं तुम्ह सुख मानहु मन माहीं॥

दो०- देखि बुद्धि बल निपुन कपि कहेउ जानकी जाहु।
रघुपति चरन हृदयँ धरि तात मधुर फल खाहु॥१७॥

चलेउ नाइ सरि पैठेउ बागा।
फल खाएसि तरु तोरै लागा॥
रहे तहाँ बहु भट रखवारे।
कछु मारेसि कछु जाइ पुकारे॥

नाथ एक आवा कपि भारी।
तेहि असोक बाटिका उजारी॥
खाएसि फल अरु बिटप उपारे।
रच्छक मर्दि मर्दि महि डारे॥

सुनि रावन पठए भट नाना।
तिन्हहि देखि गर्जेउ हनुमाना।
सब रजनीचर कपि संघारे।
गए पुकारत कछु अधमारे॥

पुनि पठयउ तेहि अच्छकुमारा।
चला संग लै सुभट अपारा॥
आवत देखि बिटप गहि तर्जा।
ताहि निपाति महाधुनि गर्जा॥

दो०- कछु मारेसि कछु मर्देसि कछु मलिएसि धरि धूरि।
कछु पुनि जाइ पुकारे प्रभु मर्कट बल भूरि॥१८॥

सुनि सुत बध लंकेस रिसाना।
पठएसि मेघनाद बलवाना॥
मारसि जनि सुत बाँधेसु ताही।
देखिअ कपिहि कहाँ कर आही॥

चला इंद्रजति अतुलति जोधा।
बंधु निधन सुनि उपजा क्रोधा॥
कपि देखा दारुन भट आवा।
कटकटाइ गर्जा अरु धावा॥

अति बिसाल तरु एक उपारा।
बरिथ कीन्ह लंकेस कुमारा॥
रहे महाभट ताके संगा।
गहि गहि कपि मर्दइ निज अंगा॥

तन्हिहि निपाति ताहि सिन बाजा।
भरि जुगल मानहुँ गजराजा॥
मुठिका मारि चढ़ा तरु जाई।
ताहि एक छन मुरुछा आई॥

उठि बहोरि कीन्हसि बहु माया।
जीति नि जाइ प्रभंजन जाया।

दो०- ब्रह्म अस्त्र तेहि साँधा कपि मन कीन्ह बिचार।
जौं न ब्रह्मसर मानउँ महिमा मिटइ अपार॥१९॥

ब्रह्मबान कपि कहुँ तेहि मारा।
परतहिुँ बार कटकु संघारा॥
तेहि देखा कपि मुरुछति भयऊ।
नागपास बाँधेसि लै गयऊ।

जासु नाम जपि सुनहु भवानी।
भव बंधन काटहि नर ग्यानी॥
तासु दूत कि बंध तरु आवा।
प्रभु कारज लगि कपिहिं बँधावा॥

कपि बंधन सुनि निसिचिर धाए।
कौतुक लागि सभाँ सब आए।
दसमुख सभा दीखि कपि जाई।
कहि नि जाइ कछु अति प्रभुताई।

कर जोरें सुर दिसिपि बिनीता।
भृकुटि बिलोकत सकल सभीता।
देखि प्रताप न कपि मन संका।
जिमि अहिगन महुँ गरुड़ असंका॥

दो०- कपिहि बिलोकि दसानन बिहसा कहि दुर्बाद।
सुत बध सुरति कीन्हि पुनि उपजा हृदयँ बिषाद॥२०॥

कह लंकेस कवन तैं कीसा।
केहि कि बल घालेहि बन खीसा॥
की धौं श्रवन सुनेहि नहिं मोही।
देखउँ अति असंक सठ तोही॥

मारे नसिचिर केहं अपराधा।
कहु सठ तोहं नि प्रान कई बाधा।
सुनु रावन ब्रह्मांड नकिाया।
पाइ जासु बल बरिचतं माया॥

जाकें बल बरिचं हरं ईसा।
पालत सृजत हरत दससीसा॥
जा बल सीस धरत सहसानन।
अंडकोस समेत गरिं कानन॥

धरइ जो बबिधि देह सुरत्राता।
तुम्ह से सठन्ह सखिावनु दाता॥
हर कोदंड कठनि जेहं भंजा।
तेहं सिमेत नृप दल मद गंजा॥

खर दूषन त्रसिरि अरु बाली।
बधे सकल अतुलति बलसाली।

दो०- जाके बल लवलेस तें जतिेहु चराचर झारं।
तासु दूत मैं जा करं हरं आनेहु प्रयि नारं॥२१॥

जानउँ मैं तुम्हारं प्रभुताई।
सहसबाहु सन परी लराई॥
समर बालं सिन करं जसु पावा।
सुनं कपं बचन बहिसं बहिरावा॥

खायउँ फल प्रभु लागी मूंखा।
कपं सुभाव तें तोरेउँ रूखा॥
सब कें देह परम प्रयि स्वामी।
मारहं मोहं कुमारग गामी॥

जन्हि मोहं मारा ते मैं मारे।
तेहं पर बाँधेउँ तनयँ तुम्हारे॥
मोहं नि कछु बाँधे कइ लाजा।
कीन्ह चहउँ नजि प्रभु कर काजा॥

बनिती करउँ जोरं कर रावन।
सुनहु मान तजं मोर सखिावन।

देखहु तुम्ह नजि कुलहि बिचारी।
भ्रम तजि भजहु भगत भय हारी॥

जाकें डर अति काल डेराई।
जो सुर असुर चराचर खाई॥
तासों बयरु कबहुँ नहि कीजै।
मोरे कहें जानकी दीजै॥

दो०-- प्रनतपाल रघुनायक करुना सिंधु खरारि।
गएँ सरन प्रभु राखहिं तव अपराध बिसारि॥२२॥

राम चरन पंकज उर धरहू।
लंका अचल राजु तुम्ह करहू॥
रिषि पुलस्ति जसु बिमल मयंका।
तेहि सिसि महुँ जनि होहु कलंका॥

राम नाम बिनु गिरा न सोहा।
देखु बिचारि त्यागि मद मोहा॥
बसन हीन नहि सोह सुरारी।
सब भूषन भूषति बर नारी।।

राम बिमुख संपति प्रभुताई।
जाइ रही पाई बिनु पाई॥
सजल मूल जिन्ह सरितिन्ह नाहीं।
बरषि गएँ पुनि तबहि सुखाहीं॥

सुनु दसकंठ कहउँ पन रोपी।
बिमुख राम त्राता नहि कोपी।
संकर सहस बिष्नु अज तोही।
सकहि न राखि राम कर द्रोही॥

दो०- मोहमूल बहु सूल प्रद त्यागहु तम अभिमान।
भजहु राम रघुनायक कृपा सिंधु भगवान॥२३॥

जदपि कही कपि अति हित बानी।
भगति बिबेक बिरति नय सानी॥
बोला बिहसि महा अभिमानी।

मलि हमहि कपि गुर बड़ ग्यानी॥

मृत्यु नकिट आई खल तोही।
लागेसि अधम सखिावन मोही॥
उलटा होइहि कि ह हनुमाना।
मतभ्रिम तोर प्रगट मैं जाना॥

सुनि कपि बचन बहुत खसिआिना।
बेगि नि हरहु मूढ़ कर प्राना॥
सुनत नसिाचर मारन धाए।
सचविन्ह सहति बभिीषनु आए॥

नाइ सीस करि बनिय बहूता।
नीति बरिोध न मारअि दूता॥
आन दंड कछु करअि गोसाँई।
सबहीं कहा मंत्र भल भाई॥

सुनत बहिसि बोला दसकंधर।
अंग भंग करि पठइअ बंदर॥

दो०- कपि कें ममता पूँछ पर सबहि कहउँ समुझाइ।
तेल बोरि पट बाँधि पुनि पावक देहु लगाइ॥२४॥

पूँछहीन बानर तहँ जाइहि।
तब सठ नजि नाथहि लिइ आइहि॥
जनि्ह कै कोन्हसि बहुत बड़ाई।
देखउँ मैं तनि्ह कै प्रभुताई॥

बचन सुनत कपि मिन मुसुकाना।
भइ सहाय सारद मैं जाना।
जातुधान सुनि रावन बचना।
लागे रचैं मूढ़ सोइ रचना।।

रहा न नगर बसन घृत तेला।
बाढ़ी पूँछ कीन्ह कपि खेला॥
कौतुक कहँ आए पुरबासी।
मारहि चरन करहि बहु हाँसी।

बाजहि ढोल देहि सब तारी।
नगर फेरि पुनि पूँछ प्रजारी॥
पावक जरत देखि हनुमंता।
भयउ परम लघुरूप तुरंता॥

नबिकि चढ़ेउ कपि कनक अटारी।
भई सभीत निसाचर नारी।

दो०- हरि प्रेरित तेहि अवसर चले मरुत उनचास।
अट्टहास करि गर्जा कपि बढ़ि लाग अकास॥२५॥

देह बिसाल परम हरुआई।
मंदिर तें मंदिर चढ़ धाई॥
जरइ नगर भा लोग बिहाला।
झपट लपट बहु कोटि कराला॥

तात मातु हा सुनिअ पुकारा।
एहि अवसर को हमहि उबारा॥
हम जो कहा यह कपि नहि होई।
बानर रूप धरें सुर कोई॥

साधु अवग्या कर फलु ऐसा।
जरइ नगर अनाथ कर जैसा॥
जारा नगरु निमिष एक माहीं।
एक बिभीषन कर गृह नाहीं॥

ता कर दूत अनल जेहि सिरिजा।
जरा न सो तेहि कारन गिरिजा॥
उलटि पलटि लंका सब जारी।
कूदि परा पुनि सिंधु मझारी॥

दो०- पूँछ बुझाइ खोइ श्रम धरि लघु रूप बहोरि।
जनकसुता के आगे ठाढ़ भयउ कर जोरि॥२६॥

मातु मोहि दीजे कछु चीन्हा।
जैसें रघुनायक मोहि दीन्हा॥
चूडामनि उतारि तब दयऊ।
हरष समेत पवनसुत लयऊ।

कहेहु तात अस मोर प्रनामा।
सब प्रकार प्रभु पूरनकामा॥
दीन दयाल बिरिदु संभारी।
हरहु नाथ मम संकट भारी॥

तात सक्रसुत कथा सुनाएहु।
बान प्रताप प्रभुहि समुझाएहु॥
मास दिवस महुँ नाथु न आवा।
तौ पुनि मोहि जिअित नहि पावा।

कहु कपि केहि बिधि राखौं प्राना।
तुम्हहू तात कहत अब जाना॥
तोहि देखि सीतलि भइ छाती।
पुनि मो कहुँ सोइ दिनु सो राती॥

दो०- जनकसुतहि समुझाइ करि बहु बिधि धीरजु दीन्ह।
चरन कमल सिरु नाइ कपि गवनु राम पहि कीन्ह॥२७॥

चलत महाधुनि गिर्जेसि भारी।
गर्भ स्त्रवहि सुनि निसिचिर नारी॥
नाघि सिंधु एहि पारहि आवा।
सबद किलिकिलि कपिन्ह सुनावा॥

हरषे सब बिलोकि हनुमाना।
नूतन जन्म कपिन्ह तब जाना॥
मुख प्रसन्न तन तेज बिराजा।
कीन्हेसि रामचंद्र कर काजा॥

मिले सकल अति भए सुखारी।
तलफत मीन पाव जिमि बारी॥
चले हरषि रघुनायक पासा।
पूँछत कहत नवल इतिहासा॥

तब मधुबन भीतर सब आए।
अंगद संमत मधु फल खाए॥
रखवारे जब बरजन लागे।
मुष्टि प्रहार हनत सब भागे॥

दो०- जाइ पुकारे ते सब बन उजार जुबराज।
सुनि सुग्रीव हरष कपि करि आए प्रभु काज॥२८॥

जौं न होति सीता सुधि पाई।
मधुबन के फल सकहिं कि खाई॥
एहि बिधि मन बिचार कर राजा।
आइ गए कपि सहित समाजा॥

आइ सबन्हि नावा पद सीसा।
मिलेउ सबन्हि अति प्रेम कपीसा।
पूँछी कुसल कुसल पद देखी।
राम कृपाँ भा काजु बिसेषी॥

नाथ काजु कीन्हेउ हनुमाना।
राखे सकल कपिन्ह के प्राना।
सुनि सुग्रीव बहुरि तेहि मिलेऊ।
कपिन्ह सहित रघुपति पहि चलेऊ॥

राम कपिन्ह जब आवत देखा।
किएँ काजु मन हरष बिसेषा॥
फटिक सिला बैठे द्वौ भाई।
परे सकल कपि चरननन्हि जाई॥

दो०- प्रीति सहित सब भेटे रघुपति करुना पुंज।
पूँछी कुसल नाथ अब कुसल देखि पद कंज॥२९॥

जामवंत कह सुनु रघुराया।
जा पर नाथ करहु तुम्ह दाया॥
ताहि सदा सुभ कुसल निरंतर।
सुर नर मुनि प्रसन्न ता ऊपर।

सोइ बिजई बिनई गुन सागर।
तासु सुजसु त्रैलोक उजागर॥
प्रभु की कृपा भयउ सबु काजू।
जन्म हमार सुफल भा आजू॥

नाथ पवनसुत कीन्हि जो करनी।
सहसहुँ मुख न जाइ सो बरनी॥

पवनतनय के चरति सुहाए।
जामवंत रघुपतहि सुनाए।

सुनत कृपानधि मिन अत भाए।
पुन हिनुमान हरष हियँ लाए॥
कहहु तात केह भाँत जानकी।
रहत करत रिच्छा स्वप्रान की।

दो०- नाम पाहरू दविस नसि ध्यान तुम्हार कपाट।
लोचन नजि पद जंत्रति जाह प्रान केह बाट॥३०॥

चलत मोह चूड़ामन दीन्ही।
रघुपत हृदयँ लाइ सोइ लीन्ही॥
नाथ जुगल लोचन भर बारी।
बचन कहे कछु जनककुमारी॥

अनुज समेत गहेहु प्रभु चरना।
दीन बंधु प्रनतारत हरना।।
मन क्रम बचन चरन अनुरागी।
केह अपराध नाथ हौं त्यागी।

अवगुन एक मोर मैं माना।
बछुरत प्रान न कीन्ह पयाना॥
नाथ सो नयनन्ह को अपराधा।
नसिरत प्रान करह हठ बाधा।

बरिह अगनि तनु तूल समीरा।
स्वास जरइ छन माह सरीरा॥
नयन स्त्रवह जलु नजि हति लागी।
जरें न पाव देह बरिहागी।

सीता कै अत बिपत बिसाला।
बनिह कहें भल दीनदयाला॥

दो०- नमिष नमिष करुनानधि जाह कलप सम बीत।
बेग चलअि प्रभुआनअि भुज बल खल दल जीत॥३१॥

सुनि सीता दुख प्रभु सुख अयना।
भरि आए जल राजिव नयना॥
बचन कायँ मन मम गति जाही।
सपनेहुँ बूझिअ बिपति कि ताही॥

कह हनुमंत बिपति प्रभु सोई।
जब तव सुमिरिन भजन न होई॥
केतिक बात प्रभु जातुधान की।
रिपुहि जीति आनिबी जानकी॥

सुनु कपि तोहि समान उपकारी।
नहि कोउ सुर नर मुनि तनुधारी॥
प्रति उपकार करौं का तोरा।
सनमुख होइ न सकत मन मोरा।।

सुनु सुत तोहि उरिनि मैं नाहीं।
देखेउँ करि बिचार मन माहीं।
पुनि पुनि कपिहि चितव सुरत्राता।
लोचन नीर पुलक अति गाता।।

दो०- सुनि प्रभु बचन बिलोकि मुख गात हरषि हनुमंत।
चरन परेउ प्रेमाकुल त्राहि त्राहि भगवंत॥३२॥

बार बार प्रभु चहइ उठावा।
प्रेम मगन तेहि उठब न भावा॥
प्रभु कर पंकज कपि के सीसा।
सुमरि सो दसा मगन गौरीसा॥

सावधान मन करि पुनि संकर।
लागे कहन कथा अति सुंदर।
कपि उठाइ प्रभु हृदयँ लगावा।
कर गहि परम निकट बैठावा॥

कहु कपि रावन पालित लंका।
केहि बिधि दहेउ दुर्ग अति बंका॥
प्रभु प्रसन्न जाना हनुमाना।
बोला बचन बिगत अभिमाना।

साखामृग कै बड़ि मनुसाई।
साखा तें साखा पर जाई॥
नाघि सिंधु हाटकपुर जारा।
निसिचर गन बधि बिपिन उजारा॥

सो सब तव प्रताप रघुराई।
नाथ न कछू मोरि प्रभुताई॥

दो०- ता कहुँ प्रभु कछु अगम नहि जा पर तुम्ह अनुकूल।
तव प्रभावँ बड़वानलहि जारि सकइ खलु तूल॥३३॥

नाथ भगति अति सुखदायनी।
देहु कृपा करि अनपायनी॥
सुनि प्रभु परम सरल कपि बानी।
एवमस्तु तब कहेउ भवानी॥

उमा राम सुभाउ जेहि जाना।
ताहि भजनु तजि भाव न आना।
यह संबाद जासु उर आवा।
रघुपति चरन भगति सोइ पावा॥

सुनि प्रभु बचन कहहि कपिबिंदा।
जय जय जय कृपाल सुखकंदा॥
तब रघुपति कपिपतिहि बोलावा।
कहा चलैं कर करहु बनावा॥

अब बिलंबु केहि कारन कीजे।
तुरत कपिन्ह कहुँ आयसु दीजे॥
कौतुक देखि सुमन बहु बरषी।
नभ तें भवन चले सुर हरषी।

दो०- कपिपति बेगि बोलाए आए जूथप जूथ।
नाना बरन अतुल बल बानर भालु बरूथ॥३४॥

प्रभु पद पंकज नावहिं सीसा।
गर्जहि भालु महाबल कीसा॥
देखी राम सकल कपि सेना।
चितइ कृपा करि राजिव नैना॥

राम कृपा बल पाइ कपदिा।
भए पच्छजुत मनहुँ गरिदिा॥
हरषि राम तब कीन्ह पयाना।
सगुन भए सुंदर सुभ नाना॥

जासु सकल मंगलमय कीती।
तासु पयान सगुन यह नीती॥
प्रभु पयान जाना बैदेहीं।
फरकि बाम अँग जनु कहि दैहीं॥

जोइ जोइ सगुन जानकहि होई।
असगुन भयउ रावनहि सोई॥
चला कटकु को बरनैं पारा।
गर्जहि बानर भालु अपारा॥

नख आयुध गरि पादपधारी।
चले गगन महि इच्छाचारी॥
केहरिनाद भालु कपि करहीं।
डगमगाहि दिग्गिज चक्किरहीं।

छं०-- चक्किरहि दिग्गिज डोल महि गरि लोल सागर खरभरे।
मन हरष सभ गंधर्ब सुर मुनि नाग कनिर दुख टरे॥
कटकटहि मर्कट बकिट भट बहु कोटि कोटिन्ह धावहीं।
जय राम प्रबल प्रताप कोसलनाथ गुन गन गावहीं॥

सहि सिक न भार उदार अहिपति बार बारहि मोहई।
गह दसन पुनि पुनि कमठ पृष्ट कठोर सो किमि सोहई॥
रघुबीर रुचरि प्रयान प्रस्थिति जानि परम सुहावनी।
जनु कमठ खर्पर सर्पराज सो लखित अबचिल पावनी॥

दो०- एहि बिधि जाइ कृपानधि उतरे सागर तीर।
जहँ तहँ लागे खान फल भालु बपिुल कपि बीर॥३५॥

उहाँ नसिाचर रहहि ससंका।
जब तें जारि गयउ कपि लंका॥
नजि नजि गृहँ सब करहि बचिारा।
नहि निसिचिर कुल केर उबारा॥

जासु दूत बल बरनि जाई।
तेहि आएँ पुर कवन भलाई।
दूतन्हि सन सुनि पुरजन बानी।
मंदोदरी अधिक अकुलानी।

रहसि जोरि कर पति पग लागी।
बोली बचन नीति रस पागी॥
कंत करष हरि सन परिहरहू।
मोर कहा अति हित हियँ धरहू॥

समुझत जासु दूत कइ करनी।
स्त्रवहिं गर्भ रजनीचर घरनी॥
तासु नारि निज सचिव बोलाई।
पठवहु कंत जो चहह भलाई।

तव कुल कमल बिपिन दुखदाई।
सीता सीत निसा सम आई॥
सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हें।
हित न तुम्हार संभु अज कीन्हें।

दो०- राम बान अहि गन सरिस निकर निसाचर भेक।
जब लगि ग्रसत न तब लगि जतनु करहु तजि टेक॥३६॥

श्रवन सुनी सठ ता करि बानी।
बिहसा जगत बिदित अभिमानी॥
सभय सुभाउ नारि कर साचा।
मंगल महुँ भय मन अति काचा॥

जौं आवइ मर्कट कटकाई।
जिअहिं बिचारे निसिचर खाई॥
कंपहिं लोकप जाकी त्रासा।
तासु नारि सभीत बड़ि हासा॥

अस कहि बिहसि ताहि उर लाई।
चलेउ सभाँ ममता अधिकाई॥
मंदोदरी हृदयँ कर चिंता।
भयउ कंत पर बिधि बिपरीता॥

बैठेउ सभाँ खबरि असि पाई।
सिंधु पार सेना सब आई॥
बूझेसि सचिव उचित मत कहहू।
ते सब हँसे मष्ट करि रहहू॥

जितेहु सुरासुर तब श्रम नाहीं।
नर बानर केहि लेखे माहीं।

दो०- सचिव बैद गुर तीनि जौं प्रिय बोलहिं भय आस।
राज धर्म तन तीनि कर होइ बेगहीं नास॥३७॥

सोइ रावन कहुँ बनी सहाई।
अस्तुति करहिं सुनाइ सुनाई।
अवसर जानि बिभीषनु आवा।
भ्राता चरन सीसु तेहिं नावा॥

पुनि सिरु नाइ बैठ निज आसन।
बोला बचन पाइ अनुसासन।
जौ कृपाल पूँछहु मोहि बाता।
मति अनुरूप कहउँ हित ताता॥

जो आपन चाहै कल्याना।
सुजसु सुमति सुभ गति सुख नाना॥
सो परनारि लिलार गोसाईं।
तजउ चउथि के चंद कि नाईं।

चौदह भुवन एक पति होई।
भूतद्रोह तिष्ठइ नहिं सोई॥
गुन सागर नागर नर जोऊ।
अलप लोभ भल कहइ न कोऊ॥

दो०- काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के पंथ।
सब परिहरि रघुबीरहि भजहु भजहि जेहि संत॥३८॥

तात राम नहिं नर भूपाला।
भुवनेस्वर कालहु कर काला॥
ब्रह्म अनामय अज भगवंता।
ब्यापक अजित अनादि अनंता॥

गो द्वजि धेनु देव हतिकारी।
कृपासधिु मानुष तनुधारी॥
जन रंजन भंजन खल बाता।
बेद धर्म रच्छक सुनु भ्राता।

ताहि बयरु तजि नाइअ माथा।
प्रनतारति भंजन रघुनाथा॥
देहु नाथ प्रभु कहुँ बैदेही।
भजहु राम बनि हेतु सनेही॥

सरन गएँ प्रभु ताहु न त्यागा।
बसि्व द्रोह कृत अघ जेहि लागा॥
जासु नाम त्रय ताप नसावन।
सोइ प्रभु प्रगट समुझु जयिँ रावन॥

दो०- बार बार पद लागउँ बनिय करउँ दससीस।
परहिरि मान मोह मद भजहु कोसलाधीस॥३९ (क)॥

मनि पलस्ति निजि सषि्य सन कहि पठई यह बात।
तुरत सो मैं प्रभु सन कही पाइ सुअवसरु तात।।३९ (ख)॥

माल्यवंत अति सचवि सयाना।
तासु बचन सुनि अति सुख माना॥
तात अनुज तव नीति बिभूषन।
सो उर धरहु जो कहत बभिीषन॥

रपिु उतकरष कहत सठ दोऊ।
दूरि नि करहु इहाँ हइ कोऊ॥
माल्यवंत गृह गयउ बहोरी।
कहइ बभिीषनु पुनि कर जोरी॥

सुमति कुमति सब के उर रहहीं।
नाथ पुरान नगिम अस कहहीं।
जहाँ सुमति तहँ संपति नाना।
जहाँ कुमति तहँ बपिति निदाना॥

तव उर कुमति बसी बपिरीता।
हति अनहति मानहु रपिु प्रीता॥

कालरात निसिचिर कुल केरी।
तेह सीता पर प्रीत घिनेरी॥

दो०- तात चरन गह मागउँ राखहु मोर दुलार।
सीता देहु राम कहुँ अहति न होइ तुम्हार॥४०॥

बुध पुरान श्रुत संमत बानी।
कही बभीषन नीत बखानी॥
सुनत दसानन उठा रसाई।
खल तोह निकट मृत्यु अब आई।

जअिस सदा सठ मोर जआिवा।
रपि कर पच्छ मूढ़ तोह भावा॥
कहस न खल अस को जग माहीं।
भुज बल जाह जिता मैं नाहीं॥

मम पुर बस तपसन्हि पर प्रीती।
सठ मलि जाइ तन्हिह कहु नीती॥
अस कह कीन्हेस चरन प्रहारा।
अनुज गहे पद बारह बारा॥

उमा संत कइ इहइ बड़ाई।
मंद करत जो करइ भलाई॥
तुम्ह पति सरसि भलेह मोह मारा।
रामु भजें हति नाथ तुम्हारा॥

सचवि संग लै नभ पथ गयऊ।
सबह सुनाइ कहत अस भयऊ॥

दो०- रामु सत्यसंकल्प प्रभु सभा कालबस तोर।
मैं रघुबीर सरन अब जाउँ देहु जन खोर॥४१॥

अस कह चला बभीषनु जबहीं।
आयूहीन भए सब तबहीं॥
साधु अवग्या तुरत भवानी।
कर कल्यान अखलि कै हानी॥

रावन जबहि बिभीषन त्यागा।
भयउ बिभव बिनु तबहि अभागा।
चलेउ हरषि रिघुनायक पाहीं।
करत मनोरथ बहु मन माहीं।

देखिहउँ जाइ चरन जलजाता।
अरुन मृदुल सेवक सुखदाता॥
जे पद परसि तिरी रिषिनिारी।
दंडक कानन पावनकारी॥

जे पद जनकसुताँ उर लाए।
कपट कुरंग संग धर धाए।
हर उर सर सरोज पद जेई।
अहोभाग्य मैं देखिहउँ तेई॥

दो०- जन्हि पायन्ह के पादुकन्हि भरतु रहे मन लाइ।
ते पद आजु बिलोकिहउँ इन्ह नयनन्हि अब जाइ॥४२॥

एहि बिधि करत सप्रेम बिचारा।
आयउ सपदि सिंधु एहि पारा॥
कपन्हि बिभीषनु आवत देखा।
जाना कोउ रिपु दूत बिसेषा॥

ताहि राखि कपीस पहि आए।
समाचार सब ताहि सुनाए।
कह सुग्रीव सुनहु रघुराई।
आवा मिलन दसानन भाई॥

कह प्रभु सखा बूझिऐ काहा।
कहइ कपीस सुनहु नरनाहा॥
जानि न जाइ निसाचर माया।
कामरूप केहि कारन आया।

भेद हमार लेन सठ आवा।
राखिअ बाँधि मोहि अस भावा॥
सखा नीति तुम्ह नीकि बिचारी।
मम पन सरनागत भयहारी॥

सुनि प्रभु बचन हरष हनुमाना।
सरनागत बच्छल भगवाना।

दो०- सरनागत कहुँ जे तजहि निजि अनहति अनुमानि।
ते नर पावर पापमय तिन्हहि बिलोकत हानि॥४३॥

कोटि बिप्र बध लागहि जाहू।
आएँ सरन तजउँ नहि ताहू॥
सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं।
जन्म कोटि अघ नासहि तबहीं।।

पापवंत कर सहज सुभाऊ।
भजनु मोर तेहि भाव न काऊ।
जौं पै दुष्ट हृदय सोइ होई।
मोरें सनमुख आव कि सोई॥

निर्मल मन जन सो मोहि पावा।
मोहि कपट छल छिद्र न भावा॥
भेद लेन पठवा दससीसा।
तबहुँ न कछु भय हानि कपीसा॥

जग महुँ सखा निसाचर जेते।
लछिमनु हनइ निमिष महुँ तेते॥
जौं सभीत आवा सरनाईं।
रखिहउँ ताहि प्रान की नाईं।

दो०- उभय भाँति तेहि आनहु हँसि कह कृपानिकेत।
जय कृपाल कहि कपि चले अंगद हनू समेत॥४४॥

सादर तेहि आगें करि बानर।
चले जहाँ रघुपति करुनाकर।
दूरिहि ते देखे द्वौ भ्राता।
नयनानंद दान के दाता।

बहुरि राम छबिधाम बिलोकी।
रहेउ ठटुकि एकटक पल रोकी।
भुज प्रलंब कंजारुन लोचन।
स्यामल गात प्रनत भय मोचन।

सघि कंध आयत उर सोहा।
आनन अमति मदन मन मोहा॥
नयन नीर पुलकति अति गाता।
मन धरि धीर कही मृदु बाता॥

नाथ दसानन कर मैं भ्राता।
निसिचर बंस जनम सुरत्राता॥
सहज पापप्रिय तामस देहा।
जथा उलूकहि तम पर नेहा॥

दो०- श्रवन सुजसु सुनि आयउँ प्रभु भंजन भव भीर।
त्राहि त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुबीर॥४५॥

अस कहि करत दंडवत देखा।
तुरत उठे प्रभु हरष बिसेषा॥
दीन बचन सुनि प्रिय मन भावा।
भुज बिसाल गहि हृदयँ लगावा॥

अनुज सहित मिलि ढिग बैठारी।
बोले बचन भगत भयहारी॥
कहु लंकेस सहित परिवारा।
कुसल कुठाहर बास तुम्हारा॥

खल मंडली बसहु दिनु राती।
सखा धरम निबहइ केहि भाँती॥
मैं जानउँ तुम्हारि सब रीती।
अति नय निपुन न भाव अनीती॥

बरु भल बास नरक कर ताता।
दुष्ट संग जनि देइ बिधाता॥
अब पद देखि कुसल रघुराया।
जौं तुम्ह कीन्हि जानि जन दाया॥

दो०- तब लगि कुसल न जीव कहुँ सपनेहुँ मन बिश्राम।
जब लगि भजत न राम कहुँ सोक धाम तजि काम॥४६॥

तब लगि हृदयँ बसत खल नाना।
लोभ मोह मच्छर मद माना॥

जब लगि उर न बसत रघुनाथा।
धरें चाप सायक कटि भाथा॥

ममता तरुन तमी अँधिआरी।
राग द्वेष उलूक सुखकारी॥
तब लगि बसति जीव मन माहीं।
जब लगि प्रिभु प्रताप रबि नाहीं॥

अब मैं कुसल मिटे भय भारे।
देखि राम पद कमल तुम्हारे॥
तुम्ह कृपाल जा पर अनुकूला।
ताहि न ब्याप त्रिबिधि भव सूला॥

मैं निसिचिर अति अधम सुभाऊ।
सुभ आचरनु कीन्ह नहिं काऊ॥
जासु रूप मुनि ध्यान न आवा।
तेहि प्रिभु हरषि हृदय मोहि लावा॥

दो०- अहोभाग्य मम अमिति अति राम कृपा सुख पुंज।
देखेउँ नयन बिरिंचि सिवि सेब्य जुगल पद कंज॥४७॥

सुनहु सखा निज कहउँ सुभाऊ।
जान भुसुंडि संभु गिरिजाऊ॥
जौं नर होइ चराचर द्रोही।
आवै सभय सरन तकि मोही।

तजि मिद मोह कपट छल नाना।
करउँ सद्य तेहि साधु समाना॥
जननी जनक बंधु सुत दारा।
तनु धनु भवन सुहद परिवारा॥

सब कै ममता ताग बटोरी।
मम पद मनहि बाँध बरि डोरी॥
समदरसी इच्छा कछु नाहीं।
हरष सोक भय नहिं मन माहीं॥

अस सज्जन मम उर बस कैसें।
लोभी हृदयँ बसइ धनु जैसें।
तुम्ह सारखे संत प्रिय मोरें।
धरउँ देह नहिं आन निहोरें।

दो०- सगुन उपासक परहित निरत नीति दृढ़ नेम।
ते नर प्रान समान मम जिन्ह कें द्विज पद प्रेम॥४८॥

सुनु लंकेस सकल गुन तोरें।
तातें तुम्ह अतिसय प्रिय मोरें॥
राम बचन सुनि बानर जूथा।
सकल कहहिं जय कृपा बरूथा।

सुनत बिभीषनु प्रभु कै बानी।
नहिं अघात श्रवनामृत जानी।
पद अंबुज गहि बारहिं बारा।
हृदयँ समात न प्रेमु अपारा॥

सुनहु देव सचराचर स्वामी।
प्रनतपाल उर अंतरजामी।
उर कछु प्रथम बासना रही।
प्रभु पद प्रीति सरित सो बही॥

अब कृपाल निज भगति पावनी।
देहु सदा सिव मन भावनी॥
एवमस्तु कहि प्रभु रनधीरा।
मागा तुरत सिंधु कर नीरा॥

जदपि सखा तव इच्छा नाहीं।
मोर दरसु अमोघ जग माहीं॥
अस कहि राम तिलक तेहि सारा।
सुमन बृष्टि नभ भई अपारा॥

दो०- रावन क्रोध अनल निज स्वास समीर प्रचंड।
जरत बिभीषनु राखेउ दीन्हेउ राजु अखंड॥४९ (क)॥

जो संपति सिव रावनहि दीन्हि दिएँ दस माथ।
सोइ संपदा बिभीषनहि सकुचि दीन्हि रघुनाथ॥४९ (ख)।

अस प्रभु छाड़ि भजहिं जे आना।
ते नर पसु बिनु पूँछ बिषाना॥
निज जन जानि ताहि अपनावा।
प्रभु सुभाव कपि कुल मन भावा॥

सुनि सरबग्य सरब उर बासी।
सरबरूप सब रहति उदासी॥
बोले बचन नीति प्रतिपालक।
कारन मनुज दनुज कुल घालक।

सुनु कपीस लंकापति बीरा।
केहि बिधि तरिअ जलधि गंभीरा॥
संकुल मकर उरग झष जाती।
अति अगाध दुस्तर सब भाँती॥

कह लंकेस सुनहु रघुनायक।
कोटि सिंधु सोषक तव सायक।
जद्यपि तदपि नीति असि गाई।
बिनय करिअ सागर सन जाई॥

दो०- प्रभु तुम्हार कुलगुर जलधि कहिहि उपाय बिचारि।
बिनु प्रयास सागर तरिहि सकल भालु कपि धारि॥५०॥

सखा कही तुम्ह नीकि उपाई।
करिअ दैव जौं होइ सहाई॥
मंत्र न यह लछिमि मन भावा।
राम बचन सुनि अति दुख पावा॥

नाथ दैव कर कवन भरोसा।
सोषिअ सिंधु करिअ मन रोसा।
कादर मन कहुँ एक अधारा।
दैव दैव आलसी पुकारा॥

सुनत बिहसि बोले रघुबीरा।
ऐसेहि करब धरहु मन धीरा॥
अस कहि प्रभु अनुजहि समुझाई।
सिंधु समीप गए रघुराई॥

प्रथम प्रनाम कीन्ह सरि नाई।
बैठे पुनि तट दर्भ डसाई॥
जबहिं बिभीषन प्रभु पहिं आए।
पाछे रावन दूत पठाए।

दो०- सकल चरति तिन्हि देखे धरें कपट कपि देह।
प्रभु गुन हृदयँ सराहहिं सरनागत पर नेह॥५१॥

प्रगट बखानहिं राम सुभाऊ।
अति सप्रेम गा बिसरि दुराऊ॥
रिपु के दूत कपिन्हि तब जाने।
सकल बाँधि कपीस पहिं आने॥

कह सुग्रीव सुनहु सब बानर।
अंग भंग करि पठवहु निसिचर।
सुनि सुग्रीव बचन कपि धाए।
बाँधि कटक चहु पास फिराए।

बहु प्रकार मारन कपि लागे।
दीन पुकारत तदपि न त्यागे।
जो हमार हर नासा काना।
तेहि कोसलाधीस कै आना।

सुनि लछिमन सब निकट बोलाए।
दया लागि हँसि तुरत छोड़ाए।
रावन कर दीजहु यह पाती।
लछिमन बचन बाचु कुलघाती॥

दो०- कहेहु मुखागर मूढ़ सन मम संदेसु उदार।
सीता देइ मिलहु न त आवा कालु तुम्हार॥५२॥

तुरत नाइ लछिमन पद माथा।
चले दूत बरनत गुन गाथा॥
कहत राम जसु लंकाँ आए।
रावन चरन सीस तिन्हि नाए॥

बहिसि दिसानन पूँछी बाता।
कहसि न सुक आपनि कुसलाता॥

पुनि कहु खबरि बिभीषन केरी।
जाहि मृत्यु आई अति नेरी॥

करत राज लंका सठ त्यागी।
होइहि जिव कर कीट अभागी॥
पुनि कहु भालु कीस कटकाई।
कठिन काल प्रेरित चलि आई॥

जिन्ह के जीवन कर रखवारा।
भयउ मृदुल चित सिंधु बिचारा॥
कहु तपसिन्ह कै बात बहोरी।
जिन्ह के हृदय त्रास अति मोरी॥

दो०- की भइ भेंट कि फिरि गिए श्रवन सुजसु सुनि मोर।
कहसि न रिपुदल तेज बल बहुत चकित चित तोर॥५३॥

नाथ कृपा करि पूँछेहु जैसें।
मानहु कहा क्रोध तजि तैसें।
मिला जाइ जब अनुज तुम्हारा।
जातहिं राम तिलक तेहि सारा॥

रावन दूत हमहि सुनि काना।
कपिन्ह बाँधि दीन्हे दुख नाना॥
श्रवन नासिका काटै लागे।
राम सपथ दीन्हें हम त्यागे॥

पूँछिहु नाथ राम कटकाई।
बदन कोटि सत बरनि न जाई।
नाना बरन भालु कपि धारी।
बिकटानन बिसाल भयकारी।

जेहिं पुर दहेउ हतेउ सुत तोरा।
सकल कपिन्ह महँ तेहि बलु थोरा।।
अमित नाम भट कठिन कराला।
अमित नाग बल बिपुल बिसाला॥

दो०- द्वबिदि मयंद नील नल अंगद गद बकिटासि।
दधमिुख केहरि निसिठ सठ जामवंत बलरासि॥५४॥

ए कपि सब सुग्रीव समाना।
इन्ह सम कोटिन्हि गनइ को नाना॥
राम कृपाँ अतुलति बल तिन्हहीं।
तृन समान त्रैलोकहि गिनहीं।

अस मैं सुना श्रवन दसकंधर।
पदुम अठारह जूथप बंदर।
नाथ कटक महँ सो कपि नाहीं।
जो न तुम्हहि जीतै रन माहीं॥

परम क्रोध मीजहिं सब हाथा।
आयस पै न देहि रघुनाथा॥
सोषहि सिधु सहति झष ब्याला।
पूरहि नि त भरि कुधर बसिाला॥

मर्दि गिर्द मलिवहि दिससीसा।
ऐसेइ बचन कहहिं सब कीसा॥
गर्जहि तर्जहि सहज असंका।
मानहुँ ग्रसन चहत हहि लंका॥

दो०- सहज सूर कपि भालु सब पुनि सिरि पर प्रभु राम।
रावन काल कोटि कहुँ जीति सकहि संग्राम॥५५॥

राम तेज बल बुधि बिपुलाई।
सेष सहस सत सकहि नि गाई।
सक सर एक सोषि सत सागर।
तव भ्रातहि पूँछेउ नय नागर॥

तासु बचन सुनि सागर पाहीं।
मागत पंथ कृपा मन माहीं।
सुनत बचन बहिसा दससीसा।
जौं असि मति सहाय कृत कीसा॥

सहज भीरु कर बचन दृढ़ाई।
सागर सन ठानी मचलाई।

मूढ़ मृषा का करसि बड़ाई।
रपिु बल बुद्धि थाह मैं पाई॥

सचवि सभीत बभिीषन जाकें।
बजिय बभिूति कहाँ जग ताकें।
सुनि खिल बचन दूत रसि बाढ़ी।
समय बचिारि पित्रकिा काढ़ी।

रामानुज दीन्ही यह पाती।
नाथ बचाइ जुड़ावहु छाती॥
बहिसि बाम कर लीन्ही रावन।
सचवि बोलि सिठ लाग बचावन॥

दो०- बातन्ह मनहि रिझाइ सठ जनि घालसि कुल खीस।
राम बरिोध न उबरसि सिरन बनिु अज ईस॥५६ (क)॥

की तजि मान अनुज इव प्रभु पद पंकज भुंग।
होहि कि राम सरानल खल कुल सहति पतंग॥५६ (ख)॥

सुनत सभय मन मुख मुसुकाई।
कहत दसानन सबहि सुनाई।
भूमि पिरा कर गहत अकासा।
लघु तापस कर बाग बलिासा॥

कह सुक नाथ सत्य सब बानी।
समुझहु छाड़ि प्रकृति अभमिानी॥
सुनहु बचन मम परहिरि क्रोधा।
नाथ राम सन तजहु बरिोधा।

अति कोमल रघुबीर सुभाऊ।
जद्यपि अखलि लोक कर राऊ॥
मलित कृपा तुम्ह पर प्रभु करहिी।
उर अपराध न एकउ धरहिी।

जनकसुता रघुनाथहि दीजे।
एतना कहा मोर प्रभु कीजे॥
जब तेहि कहा देन बैदेही।

चरन प्रहार कीन्ह सठ तेही॥

नाइ चरन सिरु चला सो तहाँ।
कृपासिंधु रघुनायक जहाँ।
करि प्रनामु निज कथा सुनाई।
राम कृपाँ आपनि गति पाई॥

रिषि अगस्ति की साप भवानी।
राछस भयउ रहा मुनि ग्यानी॥
बंदि राम पद बारहि बारा।
मुनि निज आश्रम कहुँ पगु धारा॥

दो०- बिनय न मानत जलधि जड़ गए तीनि दिनि बीति।
बोले राम सकोप तब भय बिनु होइ न प्रीति॥५७॥

लछिमन बान सरासन आनू।
सोषौं बारिधि बिसिखि कृसानू॥
सठ सन बिनय कुटिल सन प्रीती।
सहज कृपन सन सुंदर नीती।

ममता रत सन ग्यान कहानी।
अति लोभी सन बिरति बिखानी॥
क्रोधहि सिम कामहि हरिकथा।
ऊसर बीज बएँ फल जथा।

अस कहि रघुपति चाप चढ़ावा।
यह मत लछिमन के मन भावा॥
संधानेउ प्रभु बिसिखि कराला।
उठी उदधि उर अंतर ज्वाला॥

मकर उरग झष गन अकुलाने।
जरत जंतु जलनिधि जब जाने।
कनक थार भरि मनि गन नाना।
बिप्र रूप आयउ तजि माना।

दो०- काटेहि पइ कदरी फरइ कोटि जतन कोउ सींच।
बिनय न मान खगेस सुनु डाटेहि पइ नव नीच॥५८॥

सभय सधि गहि पद प्रभु केरे।
छमहु नाथ सब अवगुन मेरे।।
गगन समीर अनल जल धरनी।
इन्ह कइ नाथ सहज जड़ करनी॥

तव प्रेरति मायाँ उपजाए।
सृष्टि हेतु सब ग्रंथनि गाए।
प्रभु आयसु जेहि कहँ जस अहई।
सो तेहि भाँति रहें सुख लहई।

प्रभु भल कीन्ह मोहि सिख दीन्ही।
मरजादा पुनि तुम्हरी कीन्ही॥
ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी।
सकल ताड़ना के अधिकारी।

प्रभु प्रताप मैं जाब सुखाई।
उतरिहि कटकु न मोरि बड़ाई॥
प्रभु अग्या अपेल श्रुति गाई।
करौं सो बेगि जो तुम्हहि सोहाई॥

दो०- सुनत बिनीत बचन अति कह कृपाल मुसुकाइ।
जेहि बिधि उतरै कपि कटकु तात सो कहहु उपाइ॥५९॥

नाथ नील नल कपि द्वौ भाई।
लरिकाईं रिषि आसिष पाई॥
तिन्ह के परस किएँ गिरि भारे।
तरिहहि जलधि प्रताप तुम्हारे॥

मैं पुनि उर धरि प्रभु प्रभुताई।
करिहउँ बल अनुमान सहाई॥
एहि बिधि नाथ पयोधि बँधाइअ।
जेहिं यह सुजसु लोक तिहुँ गाइअ॥

एहि सर मम उत्तर तट बासी।
हतहु नाथ खल नर अघ रासी।
सुनि कृपाल सागर मन पीरा।
तुरतहि हरी राम रनधीरा॥

देखि राम बल पौरुष भारी।
हरषि पयोनधि भयउ सुखारी॥
सकल चरति कहि प्रभुहि सुनावा।
चरन बंदि पाथोधि सिधावा॥

छं०-निज भवन गवनेउ सिंधु श्रीरघुपतिहि यह मत भायऊ।
यह चरति कलि मलहर जथामति दास तुलसी गायऊ।
सुख भवन संसय समन दवन बिषाद रघुपति गुन गना।
तजि सकल आस भरोस गावहि सुनहि संतत सठ मना।।

दो०- सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुन गान।
सादर सुनहि ते तरहि भव सिंधु बिना जलजान॥६०॥

पाठ श्रद्धा और सद्भाव से प्रस्तुत है। विभिन्न प्रचलित प्रतियों में वर्तनी या पाठ-भेद मिल सकते हैं। किसी निश्चित फल या उपचार की गारंटी नहीं है।